Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.shisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2023 SHISRRJ | Volume 6 | Issue 6
ISSN : 2581-6306
doi : https://doi.org/10.32628/SHISRRJ

भारतीय दर्शन में योग की अवधारणा

डॉ. सुजीत कुमार
असि. प्रोफसर, संस्कृत-विभाग, कर्मक्षेत्र स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इटावा, उत्तर-प्रदेश, भारत ।

Article Info
Publication Issue :
November-December-2023
Volume 6, Issue 6
Page Number : 299-306

Article History
Received : 02 Nov 2023
Published : 21 Nov 2023

शोध सारांश:- भारतीय दर्शन में योग एक महत्त्वपूर्ण एवं व्यापक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जो शारीरिक अभ्यास के साथ-साथ मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग भी प्रशस्त करता है। योग का मूल उद्देश्य आत्म-साक्षात्कार और परमात्मा के साथ एकत्व की प्राप्ति है। योग से चित्तवृत्तियां नियंत्रित होती है। योग यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, और समाधि – के माध्यम से साधक को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है। योग आत्मज्ञान और विवेक के मार्ग पर आधारित है। इसके अनुसार, ज्ञान के माध्यम से अज्ञानता को दूर कर आत्मसाक्षात्कार किया जाता है। यह परमतत्त्व के प्रति पूर्ण भक्ति और समर्पण पर केन्द्रित है। इसके माध्यम से साधक अपनी आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ता है। योग निष्काम कर्म के सिद्धांत पर आधारित है। इसका उद्देश्य व्यक्ति को कर्म-बंधनों से मुक्त कर, उसे आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाना है। योग, भारतीय दार्शनिक परम्पराओं जैसे सांख्य, वेदान्त, न्याय वैशेषिक आदि अन्य विचारधाराओं में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। यह व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास को संतुलित करने का एक साधन है, जिसका अंतिम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति है।

मुख्य शब्द - आस्तिक एवं नास्तिक, वैदिक तथा अवैदिक, आत्म-साक्षात्कार, अपवर्ग, आर्य सत्य, त्रिरत्न, परमतत्त्व, निष्काम कर्म, प्रमेयमीमांसा, प्रमाणमीमांसा, सविकल्पक बुद्धि, निर्विकल्पक प्रज्ञा, त्रिशिक्षा, निश्रेयस् , अपवर्ग, मोक्ष, पुरुष, प्रकृति, ज्ञ, ऐकान्तिक एवं आत्यन्तिक, कैवल्य।

सभी प्रकार के आस्तिक और नास्तिक भारतीय दार्शनिकों के विचारों को भारतीय दर्शन कहते हैं। दार्शनिक चिन्तन मानव की मूल प्रवृत्ति है। प्रत्येक व्यक्ति की कोई न कोई जीवन दृष्टि,जीवन मूल्य या दर्शन अवश्य होता है। भारतीय दर्शन और

Copyright © 2023 The Author(s): This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution **4.0 International License (CC BY-NC 4.0)**

योग का सम्बन्ध आद्योपांत है क्योंकि दर्शन शब्द के अंतर्गत परमतत्त्व के साक्षात्कार के साधनों का समन्वय है –दर्शनं साक्षात्करणम् अपि च, दृश्यते अनेन इति दर्शनम्। सैद्धांतिक रूप में योग ही दर्शन है और दर्शन ही योग है। जीव और आत्मा की एकता की तरह दर्शन और योग भी एक ही तत्त्व के अस्तित्व का बोध कराते हैं। दर्शन और योग के केवल शाब्दिक स्वरूप में अन्तर है किन्तु चरम परिणति एक ही तत्त्व में है। संस्कृत साहित्य में योग की परम्परा का प्रतिष्ठित स्वरूप संहिता,आरण्यक, उपनिषद् से ही दृष्टिगोचर होता है।

दर्शन शब्द संस्कृत भाषा के दृश् धातु में ल्युट् प्रत्यय करके देखना अर्थ में निष्पन्न हुआ है। यहां देखने से तात्पर्य जानने से है। इस प्रकार दर्शन शब्द से तात्पर्य परमतत्त्व को जानने से है। दर्शन शब्द का प्रादुर्भाव दो अर्थों में हुआ है।भाव अर्थ में दर्शन शब्द का अर्थ है जो देखा जाय– दृश्यते इति दर्शनम् और करण अर्थ में दर्शन शब्द का अर्थ है– दृश्यते अनेन इति दर्शनम्। दर्शन शब्द के इन दोनों अर्थों से प्रमेयमीमांसा और प्रमाणमीमांसा का परिज्ञान होता है। ध्यातव्य है भारतीय दार्शनिक परम्परा में प्रमेय एवं प्रमाणमीमांसा का विकास मानव कल्याण के लिए हुआ है। दूसरे रूप में दर्शन शब्द का अंग्रेजी में अनुवाद फिलॉसोफी शब्द से हुआ है,जो फिलॉस् और सोफिया इन दो ग्रीक पदों से बना है, जिनका अर्थ क्रमशः प्रेम और सरस्वती या विद्या देवी है। अतः फिलॉसोफी शब्द का अर्थ हुआ विद्या– प्रेम या ज्ञान के प्रति अनुराग।

भारतीय विचारधारा में योग शब्द का प्रयोग विभिन्न अर्थों में हुआ है। योग शब्द संस्कृत भाषा के युज् धातु में घञ् प्रत्यय करके भाव अर्थ में संयोजित, ध्यान, उपाय, युक्ति आदि अनेक अर्थों में निष्पन्न हुआ है। वस्तुतः योग शब्द का अर्थ परमात्मा से जीवात्मा के साथ एकीभाव के अर्थ में होता है। इस प्रकार दर्शन और योग दोनों शब्दों का अर्थ किसी एक तत्त्व को देखने और उसी से सायुज्य स्थापित करने के लिए प्रेरित करने के अर्थ में हुआ है। मनुष्य के समस्त दुःखों का निवारण इन्हीं दोनों के अनुसरण से ही सम्भव है। ये साधन हैं, जिसके अनुसार मनुष्य अपने परंगन्तव्य तक पहुंच सकता है।

मानव जीवन संघर्षों एवं भौतिक परम्पराओं से समन्वित है। आवश्यकता आविष्कार की जननी है, इस दृष्टि से मनुष्य की बहुविध समस्याओं के समाधान के लिए एक सुगम मार्ग की आवश्यकता के रूप में योग की ओर ध्यान आकर्षित किया गया तो यह ज्ञात हुआ कि योग ही वह सरल मार्ग है, जिससे मनुष्य की जीवन सम्बन्धी समस्याओं से मुक्ति मिल सकती है। भारतीय दर्शन में योग का अत्यधिक महत्त्व है। तत्त्व साक्षात्कार के लिए योग साधना की आवश्यकता प्रायः सभी दर्शनों ने मुक्त कण्ठ से स्वीकार की है। वैदिक और अवैदिक दर्शन में योग की उपयोगिता सर्वमान्य है। सविकल्पक बुद्धि (ज्ञाता,ज्ञेय एवं ज्ञान के भेद) से निर्विकल्पक प्रज्ञा (ज्ञाता,ज्ञेय एवं ज्ञान के अभेद) में परिणत करने के कारण योग साधना की उपादेयता निर्विवाद है। युक्ति पूर्वक तत्त्वज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न दर्शन और योग दोनों शब्दों को परिभाषित करता है। भारत के प्रत्येक दार्शनिक सम्प्रदाय में योग की गहन पद्धति का विकास हुआ है। मानव जीवन की सांसारिक समस्याओं का समाधान करने का उपाय भी दर्शन में ही प्रतिपादित है। प्रायः सभी दर्शनों की उत्पत्ति लौकिक विचारों से हुई है।आत्मा का परमात्मा से सम्बन्ध स्थापित करने में जो मार्ग उपयोग किए जाते हैं वे सब योग हैं,जिस प्रकार मोक्ष को भारतीय दर्शन में विविध नामों से अभिहित किया गया है, उसी प्रकार योग को भी भारतीय दर्शन में विविध नाम से अभिहित किया गया है।

भारतीय दर्शन में योग की अवधारणा का स्वरूप क्रमशः इस प्रकार है–

चार्वाक् दर्शन - परम्परया देवताओं के गुरु बृहस्पति को इस दर्शन का प्रवर्तक माना जाता है,जो व्यक्ति ईश्वर, आत्मा, परलोक तथा सारे आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों को चबा जाए उसे चार्वाक् कहते हैं। इस दर्शन में योग को भौतिक मूल्य के रूप में देख सकते हैं। मूल्य को भारतीय दर्शन की शब्दावली में पुरुषार्थ कहते हैं। पुरुषार्थ चार हैं- धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। भौतिक मूल्यों में अर्थ और काम सर्वोपरि है, जिनकी सहायता से शारीरिक सुख की प्राप्ति होती है और शारीरिक सुखरूप परमपुरुषार्थ तक पहुंचने के साधन भी अर्थ और काम है। चार्वाक् मत में खाने-पीने और मौज उड़ाने को ही व्यक्ति का परमपुरुषार्थ और मरण को अपवर्ग माना जाता है-मरणम् एव अपवर्ग:। इस विचारधारा को लोकायत दर्शन भी कहते हैं। इसके अतिरिक्त जिस आध्यात्मिकता के द्वारा आत्मा और परमात्मा का सम्बन्ध स्थापित होता है,उस आध्यात्मिक साधना के लिए मनुष्य का स्वस्थ रहना आवश्यक है, जिसकी पूर्ति भौतिक मूल्यों से संभव है। अत: चार्वाक् का भौतिक मूल्य अर्थ और काम ही योग है। इसी अर्थ और काम से चार्वाक् जीवन का अन्तिम लक्ष्य सुखभोग को प्राप्त करने के लिए प्रेरित करता है।

जैन दर्शन- जैन दर्शन में तीर्थंकरों की उपासना की गयी है, जिसे 'जिन' भी कहते हैं, जिसका अर्थ विजेता या जीतने वाला है। जैन दर्शन में त्रिरत्न का पालन करना भी एक योग पद्धति है, जिसमें सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चरित्र को परिगणित किया गया है। इन तीनों के सम्मिलित होने पर ही मोक्ष मिलता है।

सम्यक् दर्शन- जैन शास्त्रों में प्रतिपादित सिद्धांतों एवं तत्त्वों के प्रति प्रगाढ़ श्रद्धा ही सम्यक् दर्शन है।

सम्यक् ज्ञान - इन सिद्धांतों एवं तत्त्वों के प्रति यथार्थ ज्ञान को सम्यक् ज्ञान कहा गया है।

सम्यक् चरित्र- इस ज्ञान को अपने आचरण में चरितार्थ करने के साथ -साथ अहित कार्यों का वर्जन और हित कार्यों का आचरण ही सम्यक् चरित्र है । सम्यक् चरित्र के द्वारा जीव अपने कर्मों से मुक्त हो सकता है क्योंकि कर्मों के कारण ही बंधन और दु:ख होते हैं, जिनके निवारण के लिए पंच महाव्रतों का पालन आवश्यक है-

अहिंसा-जैन दार्शनिकों का अहिंसा विषयक विचार अन्य दार्शनिक सम्प्रदायों से पृथक् है । जैन दर्शन में अहिंसा का अर्थ मन,वाणी, कर्म से दूसरों को हानि न पहुंचाना ही नहीं है अपितु अपनी सामर्थ्य के अनुसार उनके प्रति मन,वाणी, कर्म से तत्पर रहना है।

सत्य- मिथ्या वचन का परित्याग करते हुए हितकारी एवं सत्य- प्रिय वचन का पालन तथा हितकारी एवं सत्य-कटु वचन से किसी को कष्ट न पहुंचाना। इस व्रत के पालन के लिए लोभ, भय एवं क्रोध को दूर करना चाहिए तथा पर निन्दा की प्रवृत्ति पर दमन आवश्यक है।

अस्तेय- सहमति के बिना पर द्रव्य का ग्रहण अस्तेय है। जैन दर्शन के अनुसार किसी जीव का प्राण जिस तरह पवित्र है,उसी तरह उसकी धन सम्पत्ति भी पवित्र है। अत: धन संपत्ति का अपहरण उसके जीवन का अपहरण है। जीवन का अस्तित्व प्राय: धन पर ही निर्भर करता है। अत: प्राण के आधारभूत धन की रक्षा भी अत्यंत आवश्यक हो जाती है।

ब्रह्मचर्य- मन, वचन, कर्म से बाह्य, मानसिक, सूक्ष्म, स्थूल, ऐहिक, पारलौकिक सभी प्रकार की कामनाओं का परित्याग करना ही ब्रह्मचर्य पालन है।

अपरिग्रह- इंद्रिय सुख प्रदान करने वाले सभी प्रकार के विषयों रूप, रस, गंध, स्पर्श,शब्द का परित्याग करना ही अपरिग्रह है। यह सब योग की पद्धतियां हैं। उक्त त्रिरत्नों से जीवन को अनंत चतुष्टय की प्राप्ति होती है। अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत वीर्य, अनंत सुख ही चतुष्टय है।

बौद्ध दर्शन- बौद्ध धर्म के प्रवर्तक गौतम बुद्ध के उपदेशों से बौद्ध दर्शन की उत्पत्ति हुई है। सांसारिक दु:खों से दु:खी होकर गौतम बुद्ध ने अध्ययन, तप और चिन्तन किया, जिसका सार इनके चार आर्यसत्यों में पाया जाता है। यह चार आर्य सत्य इस प्रकार है– दु:ख है, दु:ख का कारण है, दु:ख का अंत है, दु:ख दूर करने का उपाय है। इनमें प्रथम आर्य सत्य को किसी न किसी रूप में सभी मानते हैं क्योंकि यह लौकिक अनुभव से सिद्ध है। बौद्ध दर्शन के चतुर्थ आर्यसत्य दु:ख निरोध मार्ग तथा उसके आठ अंग, यह सब योग की पद्धतियां हैं। चतुर्थ आर्यसत्य निर्वाण प्राप्ति के लिए एक मार्ग है। इसी मार्ग का अनुसरण करके बुद्ध ने निर्वाण की अवस्था को प्राप्त किया था, जिसके आठ मार्ग इस प्रकार से है–

सम्यक् दृष्टि- यह बुद्ध वचनों में श्रद्धा और चार आर्यसत्यों का ज्ञान है। सभी दु:खों का कारण अविद्या या मिथ्या दृष्टि है। इस दृष्टि को छोड़कर वस्तुओं के यथार्थ स्वरूप पर सतत् ध्यान रखना सम्यक् दृष्टि है।

सम्यक् संकल्प –चार आर्यसत्यों के ज्ञान के अनुरूप दृढ़ संकल्प होकर जीवन बिताना ही सम्यक् संकल्प है और जो निर्वाण चाहते हैं,उन्हें सांसारिक विषयों की आसक्ति, दूसरों के प्रति विद्वेष और हिंसा इन तीनों का परित्याग करने का संकल्प करना भी सम्यक् संकल्प है।

सम्यक् वाक् – यह वाणी की सत्यता और पवित्रता है। सम्यक् संकल्प मानसिक होने के साथ –साथ कार्यरूप में परिणत भी होना चाहिए। इसमें सर्वप्रथम अपने वचनों पर नियंत्रण रखना चाहिए है। अर्थात्–मिथ्यावादिता, निन्दा, अप्रिय वचन तथा वाचलता आदि से विरक्त होना चाहिए।

सम्यक् कर्म- सम्यक् संकल्प के अनुरूप कर्मों का नियमन सम्यक् कर्म है। यह हिंसा, द्वेष आदि दुराचरण का त्याग करते हुए सम्यक् संकल्प को वचन के साथ–साथ कर्म में भी परिणत करना सम्यक् कर्म है।

सम्यक् आजीव- इसमें बुरे वचन एवं कर्म के परित्याग के साथ–साथ मनुष्य को शास्त्रों के अनुरूप युक्त पूर्वक शुद्ध उपाय और सम्यक् संकल्प से सुदृढ़ होकर जीवकोपार्जन करना ही सम्यक् आजीव है।

सम्यक् व्यायाम- यह धर्म मार्ग से विचलित न होने का सतत् प्रयत्न है। इसमें यह भाव होना चाहिए कि मन में पुराने बुरे भावों का नाश तथा नये बुरे भावों का प्रादुर्भाव न होने पाये और सदैव नये अच्छे भावों के लिए मन को पूर्ण प्रयत्नशील रखना सम्यक् व्यायाम है।

सम्यक् स्मृति- इस अवस्था में जिन विषयों का ज्ञान प्राप्त हो चुका है, उनका निरन्तर स्मरण रखना ही सम्यक् स्मृति है। इसमें अच्छे –बुरे सभी प्रकार के भावों को समझकर उसके प्रति यथार्थ भाव रखकर सांसारिक विषयों से विरक्त की स्मृति सदैव बनी रहे यही सम्यक् स्मृति है।

सम्यक् समाधि- यह चित्त की एकाग्रता द्वारा निर्विकल्पक प्रज्ञा की अनुभूति है। उक्त सात मार्गों के अनुसरण से अपनी बुरी चित्तवृत्तियों का त्याग कर देता है, वह सम्यक् समाधि में प्रविष्ट होने के योग्य हो जाता है और चार अवस्थाओं से होते हुए निर्वाण प्राप्त कर लेता है। समाधि की प्रथम अवस्था सवितर्क, सुविचार, और विवेक से उत्पन्न शान्ति तथा आनन्द का अनुभव करता है। समाधि की दूसरी अवस्था में प्रगाढ़ चिन्तन के कारण शान्ति तथा चित्तस्थिरता का उदय होता है। इसी अवस्था में आनन्द तथा शान्ति का ज्ञान भी साथ-साथ रहता है। समाधि की तीसरी अवस्था में मन आनन्द और शान्ति से हटकर एक उपेक्षा भाव को प्राप्त करता है। इसमें चित्त की साम्यावस्था और उसके साथ-साथ दैहिक सुख का भाव भी रहता है। समाधि की चतुर्थ अवस्था में चित्त की साम्यावस्था, दैहिक सुख एवं ध्यान के आनन्दादि किसी भी अवस्था का भान नहीं होता। यह अवस्था पूर्ण शान्ति, पूर्ण विराग तथा पूर्ण निरोध की है। इसमें सुख -दु:ख से रहित प्रज्ञा का उदय होता है और सभी दु:खों का निरोध हो जाता है तथा अर्हत्व या निर्वाण की प्राप्ति हो जाती है।

योग साधना के इन अष्टांगिक मार्गों के तीन प्रधान अंग- शील, समाधि,प्रज्ञा हैं। बौद्ध दर्शन में इसे त्रिशिक्षा कहा जाता है। शील में सम्यक् वाक्, सम्यक् कर्म,सम्यक् आजीव,और सम्यक् व्यायाम का समावेश होता है। समाधि में सम्यक् स्मृति और सम्यक् समाधि आते हैं। प्रज्ञा के अंतर्गत सम्यक् दृष्टि और सम्यक् संकल्प आते हैं। समाधि और प्रज्ञा की भावना रखने वाला तृष्णा का नाश करके निर्वाण प्राप्त

करता है।

न्याय दर्शन- न्याय दर्शन में मोक्ष को परम पुरुषार्थ माना गया है। सोलह पदार्थों का ज्ञान ही मोक्ष का साधन है। मोक्ष ही अपवर्ग है। न्याय दर्शन की मान्यता है-प्रमाण-प्रमेय-संशय-प्रयोजन-दृष्टान्त-सिद्धांत-अवयव-तर्क-निर्णय-वाद-जल्प-वितण्डा-हेत्वाभास-छल-जाति-निग्रहस्थान के तत्त्वज्ञान से नि:श्रेयस् अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति होती है। ये मोक्ष ही प्रमेय है, जिसे प्रमाणों के द्वारा जाना जा सकता है। प्रमेयों की संख्या बारह है। जिसमें आत्मा, शरीर, इंद्रिय, अर्थ, बुद्धि, मन, प्रवृत्ति, दोष, प्रेत्यभाव, फल, दु:ख, अपवर्ग के ज्ञान से इक्कीस प्रकार के दु:खों की आत्यंतिक निवृत्ति ही अपवर्ग है। अत: सोलह पदार्थों और बारह प्रमेयों के ज्ञान से इक्कीस प्रकार के दु:खों में शरीर और षडेन्द्रिय घ्राण, त्वचा, चक्षु, रसना, श्रोत,मन तथा इनके विषय शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, संवेदना एवं इनके ज्ञान आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, संकल्पविकल्प और सुख-दु:ख का निरोध अपवर्ग है।

वैशेषिक दर्शन- वैशेषिक सूत्रों के प्रणेता कणाद के विचारों को ले तो सप्त पदार्थ-द्रव्य, गुण, कर्म,सामान्य, विशेष,समवाय और अभाव में प्रारंभिक छह पदार्थों के तत्त्वज्ञान से नि:श्रेयस् की सिद्धि होती है। यही छ: पदार्थ मोक्ष प्राप्ति के साधन हैं,जिसे योग कह सकते हैं।

सांख्य दर्शन- इस दर्शन के प्रवर्तक महर्षि कपिल हैं। सांख्य दर्शन में पच्चीस तत्त्वों का विवेचन हुआ है, जिसमें पुरुष, प्रकृति, महत्, अहंकार, मन, पंचज्ञानेन्द्रिय, पंचकर्मेन्द्रिय, पंचतन्मात्र तथा पंचमहाभूत से सृष्टि की उत्पत्ति होती है। इन पच्चीस तत्त्वों में चेतन पुरुष और अचेतन प्रकृति दो स्वतंत्र एवं निरपेक्ष तत्त्व हैं। पुरुष ज्ञ तत्त्व है। अव्यक्त मूल प्रकृति है, प्रकृति से महत् (बुद्धि), महत् से अहंकार और अहंकार से मन, पंचज्ञानेन्द्रिय, पंचकर्मेन्द्रिय, पंचतन्मात्र की उत्पत्ति होती है।

पंचतन्मात्र से पंचमहाभूत का प्रादुर्भाव होता है। यहां पुरुष न कार्य है न कारण है। प्रकृति केवल कारण है और महत् तथा अहंकार तथा पंचतन्मात्र कार्य और कारण दोनों हैं। मन, पंचज्ञानेन्द्रिय, पंचकर्मेन्द्रिय, पंचमहाभूत ये सोलह तत्त्व केवल कार्य रूप हैं। अव्यक्त और व्यक्त तत्त्व प्रमेयरूप हैं, विषय रूप हैं। सांख्य दर्शन में प्रकृति,पुरुष और ज्ञ का ज्ञान ही योग है। सांख्य दर्शन में प्रतिपादित त्रिविध दु:खों की ऐकान्तिक और आत्यंतिकनिवृत्ति कैवल्य है। इस कैवल्य तक पहुंचने के लिए व्यक्त,अव्यक्त और ज्ञ का ज्ञान आवश्यक है। यही व्यक्त, अव्यक्त और ज्ञ वह साधन है जिनके ज्ञान से त्रिविद्ध दु:खों की निवृत्ति होती है। यही व्यक्त, अव्यक्त और ज्ञ का ज्ञान तथा त्रिविध दु:खों की निवृत्ति सांख्य दर्शन का योग है। सांख्य दर्शन का त्रिविध दु:ख इस प्रकार है–

आध्यात्मिक दु:ख - यह दो प्रकार का होता है।

शारीरिक दु:ख - वात, पित्त, कफ के वैषम्य से शारीरिक दु:ख होता है।

मानसिक दु:ख - क्रोध, लोभ, भय से मानसिक दु:ख होता है।

आधिभौतिक दु:ख - बाह्य कारणों से मनुष्य,पशु, मृग, पक्षी, सरीसृप और स्थावर प्राणियों के निमित्त से प्राप्त होने वाला दु:ख आधिभौतिक है।

आधिदैविक दु:ख - बाह्य कारणों यक्ष, राक्षस, विनायक तथा ग्रहों के आवेश से आधिदैविक दु:ख होता है।

योग दर्शन- योग दर्शन में योग को चित्तवृत्ति का निरोध कहा गया है– **योगश्चित्तवृत्ति निरोध:।** चित्तवृत्ति निरोध के आठ आयाम हैं– यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि। इन्द्रियों का शरीर, मन, वाणी का संयम यम है। इनकी संख्या पांच है – अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह।

सदाचार का पालन नियम है। इनमें शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्राणिधान इन पांच नियमों को परिगणित किया गया है। शरीर का संयम ही आसन है। प्राण वायु का संयम ही प्राणायाम है। इंद्रियों को बाह्य विषयों से हटाना प्रत्याहार कहलाता है। किसी स्थान विशेष पर चित्त को स्थिर करना धारणा है। ध्येय वस्तु का निरंतर मनन या एकाग्रता ही ध्यान है। योग की साधना का लक्ष्य समाधि है। अत: अन्तिम लक्ष्य समाधि तक पहुंचना ही योग है।

मीमांसा दर्शन - प्राचीन मीमांसा दर्शन में स्वर्ग को ही जीवन का परम लक्ष्य माना गया है। सभी कर्मों का अन्तिम उद्देश्य स्वर्ग प्राप्ति है। मीमांसा की दृष्टि में वेद नित्य ज्ञान के भंडार के साथ–साथ शाश्वत विधि वाक्य के आधार भी हैं। विधि वाक्यों के अनुसार यज्ञादि क्रिया करने से इष्ट की प्राप्ति और अनिष्ट परिहार होता है । मीमांसा दर्शन में विधिवाक्यों से निर्मित यज्ञादिक्रियाएं योग हैं,। जिससे स्वर्ग रूप अन्तिम फल की प्राप्ति होती है। मीमांसक भी मोक्ष को सबसे बड़ा नि:श्रेयस् मानते हैं।

अद्वैत वेदांत- अद्वैत वेदान्त दर्शन में योग साधन चतुष्टय का पालन करने वाला ही ब्रह्म विद्या का अधिकारी होता है । ये चार हैं–

नित्यानित्यवस्तुविवेक - नित्य और अनित्य वस्तुओं में भेद करने का ज्ञान ।

ईहामुत्रार्थफलभोगविराग- इस लोक और परलोक के सकल भोगों की कामना का परित्याग।

शमाधदिषट्कसंपत्ति- मन का संयम, इन्द्रियों का संयम,शास्त्र में श्रद्धा, चित्त को ज्ञान के साधन में लगाना, विक्षेपकारी कार्यों से विरत, शीतोष्णादि सहन करना, साधक को मोक्ष प्राप्ति के लिए दृढ़ संकल्प होना, ये छः शम, दम, श्रद्धा, समाधान, उपरति और तितिक्षा का पालन करना आवश्यक है।

मुमुक्षत्व- साधक को मोक्ष प्राप्त के लिए दृढ़ संकल्प होना चाहिए।

इन चारों साधनों से व्यक्ति ब्रह्म ज्ञान प्राप्त कर लेता है। ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करने के ये चारों साधन योग पद्धति हैं। नित्य, नैमित्तिक, प्रायश्चित, उपासना ये साधक के लिए अनिवार्य कर्म हैं। साधक के लिए यह कर्म ही योग है, जिसके कारण वह ब्रह्म विद्या का अधिकारी बनने के लक्ष्य को प्राप्त करता है।

विशिष्टाद्वैत - इसके प्रवर्तक रामानुज प्रपत्ति और भक्ति को योग बताया है । ये भक्ति मार्ग के द्वारा ईश्वर को प्राप्त करने की बात करते हैं । इस मार्ग में कर्म और ज्ञान साधन हैं, इन्हीं के सहयोग से भक्ति का उदय होता है । प्रपत्ति मार्ग में ईश्वर के प्रति अपनेको पूर्णतया समर्पित कर देना है ।प्रपत्ति का अर्थ शरणागति है, ईश्वर में अनन्य भक्ति ही पूर्ण आत्म समर्पण लाती है । यह मुक्ति का चरम साधन है ।

अत: सभी भारतीय दर्शन में योग के विषय में नानारूप दिखायी देता है–चार्वाक्–अर्थ–काम,जैन–त्रिरत्न सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चरित, बौद्ध–चतुर्थ आर्य सत्य एवं अष्टांगिक मार्ग, सांख्य– व्यक्ता व्यक्तज्ञविज्ञानात् का ज्ञान, योग अष्टांगिक मार्ग, न्याय–षोडश पदार्थों का ज्ञान, वैशेषिक– षड् पदार्थों का ज्ञान, मीमांसा–विधि वाक्यों का ज्ञान, अद्वैतवेदांत साधन चतुष्टय का ज्ञान, विशिष्टाद्वैत– भक्ति और प्रपत्ति का ज्ञान । यह सब परमतत्त्व को प्राप्त करने के साधन हैं, जो भारतीय दर्शन में योग के रूप में परिगणित हैं । यदि इन सभी को समन्वय की दृष्टि से कहना चाहे तो श्रवण, मनन, निदिध्यासन ही योग है । शास्त्रों में प्रतिपादित योग सम्बन्धी सिद्धान्तों का श्रवण अथवा अध्ययन, इन सिद्धांतों का युक्ति पूर्वक विचार और बार–बार ध्यान करना है।

इस प्रकार योग प्राचीनकाल से लेकर अद्यतन लोगों की आवश्यकताओं के अनुकूल शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक स्तर पर एक सुदृढ़ आधार प्रदान करता है, जिससे मानव जीवन की सार्थकता एवं सर्वांगीणताके विकास का मार्ग प्रशस्त होता है। आधुनिक भारतीय दर्शन में योग शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक तत्त्वों को आधुनिक जीवन शैली के अनुसार अनुकूलित करता है। इसमें मुख्य रूप से शारीरिक व्यायाम (आसन), श्वास तकनीक (प्राणायाम) और ध्यान (मेडिटेशन) पर ध्यान दिया जाता है। आधुनिक योग पश्चिमी देशों प्रसिद्ध हुआ, जिसमें विशेष रूप से स्वामी विवेकानन्द, परमहंस, योगानन्द और अन्य योगियों का का महत्त्वपूर्ण योगदान है। आधुनिक जीवनशैली में योग एक महत्त्वपूर्ण साधन बन गया है। यह न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को बनाए रखने में सहायक है, बल्कि मानसिक और भावनात्मक संतुलन भी प्रदान करता है। आजकल यह व्यक्तिगत स्वास्थ्य, फिटनेस, तनाव प्रबन्धन और आन्तरिक शान्ति की प्राप्ति के लिए एक लोकप्रिय उपाय बन गया है।

सहायक ग्रन्थ सूची-

1. भारतीय दर्शन आलोचन एवं अनुशीलन–चंद्रधर शर्मा–मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स प्रा. लि. दिल्ली
2. भारतीय दर्शन की समीक्षात्मक रूपरेखा–राममूर्ति पाठक–अभिमन्यु प्रकाशन इलाहाबाद
3. भारतीय दर्शन–श्री सतीशचन्द्र चट्टोपाध्याय एवं श्री धीरेन्द्र मोहन दत्त–पुस्तक भण्डार पब्लिशिंग हाउस, पटना
4. वेदान्तसार: – प्रो. सन्तनारायश्रीवास्तव– सुदर्शन प्रकाशन गाजियाबाद
5. सांख्य दर्शन – प्रो. सन्तनारायश्रीवास्तव– सुदर्शन प्रकाशन गाजियाबाद
6. पातंजलयोगदर्शनम् – डॉ. सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव– चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी
7. योग–दर्शन– हरिकृष्णदास गोयन्दका, गीताप्रेस, गोरखपुर।